टिहरी-सफ़र गांव का

सीमा-आभा

'पहाड़' शब्द सुनते ही ज़हन में एक सुन्दर-सी छवि उभर आती है। शीत की ठिठुरन, पेड़ व झुरमुटों से लदे पहाड़। छोटी-छोटी पगडण्डियां और कलकल करती कोई नटखट सी नदी, परन्तु इस सुन्दरता का एक रूप हम अनायास ही भुला बैठते हैं– वह है पहाड़ों का संघर्षमय जीवन। ख़ासकर वे औरतें जिनके पैरों पर ही यहां की जिन्दगी गतिमय है।

पहाड़ की औरतों के पहाड़ जैसे कामों, उनकी दिनचर्या के बीच अपने अस्तित्व को खोजती औरत– इन सबको बहुत करीब से देखने का मौका हमें 19 जून 1997 को मिला।

महिला समाख्या परियोजना: एक परिचय

महिला समाख्या परियोजना, उत्तर प्रदेश के दस जिलों में कार्यशील है। इनमें से एक है टिहरी गढ़वाल। यह परियोजना यहां की महिलाओं की समस्याओं को लेकर काम करती है। इनके काम का सीधा सम्बन्ध पहाड़ और उससे जुड़ी मिट्टी से है। विभिन्न क्षेत्रों में काम का क्या रूप है? क्या प्रक्रिया है-इसे करीब से देखने-समझने के लिए ही हम दो लोग 'जागोरी' से टिहरी के गांवों में गए।

हमें चार गांवों में जाने का मौका मिला। सभी महिलाओं ने कुछ अपनी कही और कुछ हमारी सुनी। ये गांव सिलगांव, होल्टा-महड़ और खाण्ड गांव थे। इन गांवों में मुख्यतः बाल-विवाह का प्रचलन है। इसका विरोध महिला समाख्या में कार्यरत सहयोगिनियां भी कर रही हैं। इन गांवों में महिला-समाख्या के कार्यक्रम से काफ़ी मज़बूती मिली है। ग्रामीण महिलाएं जिसे पहले आपसी मामला कहकर टाल देती थीं, अब एकजुट होकर किसी भी महिला के खिलाफ़ हो रहे अत्याचार का मुकाबला करती हैं।

शुरुआत हुई गांवों में 'महिला केन्द्रों' से जहां ग्रामीण बहनों की शिक्षा का इन्तज़ाम किया गया है। गांव की ही कोई महिला (जिसे सहेली के नाम से जाना जाता है) अपने घर पर ही रात को औरतों को बुलाती है और उन्हें अक्षर ज्ञान करवाती है। कई औरतों ने अपना नाम भी लिखना सीख लिया है।

बुरांश–एक बाल केन्द्र

इसी तरह 'बुरांश' एक बाल केन्द्र है। यहां स्कूल न जा पाने वाले बच्चे आकर अनेक तरह की क्रियात्मक गतिविधियों द्वारा बहुत कुछ सीखते

हैं। वे गीत-कविताओं के माध्यम से पढ़ना-लिखना भी सीख रहे हैं। एक खास माहौल में सीखने-सिखाने की प्रक्रियायें चलती हैं।

औरतों से अक्सर सुनने में आता है-"हमारा कोई ठिकाना नहीं, न मायका न ससुराल हमारा।" बस इसी अहसास ने गांव में ही नारी-ठिकानों की योजना बनाना शुरू किया। यह औरतों की अपनी जगह थी जिसे वो अपनी जरूरतों के अनुसार बनाती हैं। महड़ एवं खाण्ड गांव के बीच ऐसा एक ठिकाना बना। इस ठिकाने से उन्हें बहुत लगाव है। इसके लिए वो लड़ मरने को तैयार हैं। इसे सभी गांव की औरतें अपना ठौर

कहती हैं। उनमें से एक ने कहा 'पहले तो आदमी ही एकजुट होकर मीटिंग करते थे, हंसी-ठिठोली करते थे। अब तो हमारा भी ठिकाना है। यहां हम औरतें एक साथ बैठकर हंसती-बोलती हैं। यहां की दीवार, जमीन सब कुछ हमारी है।' पहाड़ के संघर्षमय जीवन की आदी महिलाएं इससे बढ़कर भी कुछ करना चाहती हैं। छोटे-छोटे काम धंधे करना चाहती हैं, ताकि वे आत्मनिर्भर हो सकें।

एक टूटती हुई परम्परा

पहाड़ ही नहीं हिन्दुस्तान में सभी जगह एक धारणा है कि खेत में पहला हल मर्द ही लगाते हैं। औरतों के लिए इसे तोड़ना एक चुनौती बनकर सामने आया है। हल मर्द लगाते हैं। उसके बाद के सारे काम औरतों के कन्धों पर ही होते हैं। रोपाई से लेकर कटाई तक सारा भार औरतों पर ही होता है। कहीं यह प्रश्न औरतों को कचोटता है कि हम सब कर सकती हैं, पर हल नहीं लगा सकतीं। टिहरी गढ़वाल की आर्थिक, सामाजिक व्यवस्था पूरी तरह से औरतों पर निर्भर है। वहां खेत में हल चलाने के लिए मर्दों का मुंह देखना पड़ता है। यह सब कई औरतों के लिए मुश्किल खड़ी कर देता है, क्योंकि उनके पति, भाई, पिता नौकरी की तलाश में शहर चले जाते हैं। इन औरतों को किसी और गांव के मर्द से हल लगवाना पड़ता है। बदले में उसे पैसे देने पड़ते हैं। इस बात को लेकर औरतों में चर्चाओं का दौर शुरू हो गया। अगर वे अपने चारों ओर गहरी निगाहें डालकर बदल रही हैं तो हल पर हाथ धरने की तैयारी भी कर रही हैं। देखें धरती डोलती है क्या?

थोड़ी सी जमीन जो इनके पास है वह भी इन औरतों के बोझिल जीवन की तरह थक गई है। एक औरत ने कहा, "हमारी जमीनें हमारे आदमियों की तरह शराबी हो गई हैं। विदेशी खाद के बग़ैर अब कुछ नहीं उपजता।" अंग्रेजों के ज़माने से यहां के मर्द मिलिट्री में जाते रहे हैं। वहीं से चलती आ रही है ये शराब की लत। गांव-गांव में कच्ची शराब पकती है। सस्ती और ख़तरनाक शराब। मनों लकड़ियों के गट्ठर के बोझ को पीठ

(क्रमशः पृष्ठ 26 पर)

टिहरी–सफ़र गांव का (पृष्ठ 14 का शेष भाग)

पर बांधकर पहाड़ों की पेचीदा चढ़ाई तय करने वाली ये औरतें, शराब के खिलाफ़ जानलेवा लड़ाई में बार-बार हार जाती हैं, पर रुकती नहीं। भट्टियां तोड़ने का काम लगातार चलता रहता है। साथ ही उन्होंने 'रंत-रैबार' के एक अंक में शराब की राजनीति और उससे बढ़ती हिंसा पर विस्तार से जानकारी दी है।

आज उनके संगठन की जड़ें गहरी होती मालूम पड़ती हैं। उन्होंने बड़े गर्व से कहा पहले बाहर से कोई भी आता था तो सरपंच के घर ले जाया जाता था आज उन्हें 'सखी' के घर लाते हैं।' अपनी अलग पहचान की ताकत और जानकारियों की गर्मायिश से वो उस ठण्डे-कठोर इलाके में अपनी लड़ाईयां खुद लड़ रही हैं।

इतने संघर्षों के बावजूद भी जीवन अपने सुर-ताल में जीता है। श्रम और संगीत का अनूठा तालमेल यहां सुनाई पड़ता है। बोझा ढोती महिलाओं के कदमों के स्वर, मधुर गीतों से गूंजता वातावरण शायद इसी रसमय संगीत में डूबकर ये महिलाएं अपने कष्ट को भुला पाती हैं और लगातार पथरीली राहों पर बढ़ती जा रही हैं। □